E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2021; 3(4): 231-235
Received: 10-08-2021
Accepted: 15-09-2021

डॉ. अवधेश कुमार
एसोशिएट प्रोफेसर,
सत्यवती महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
डॉ. अवधेश कुमार
एसोशिएट प्रोफेसर,
सत्यवती महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

लोक-संस्कृति के पक्षधर रेणु (कहानियों के संदर्भ में)

डॉ. अवधेश कुमार

प्रस्तावना

लोक साहित्य का उदय मनुष्य के जन्म से ही हुआ है। लोक साहित्य लिखित पोथियों में संकलित न होकर मनुष्य की वाणी से स्वयं ही स्फुट होता चला जाता है। लोक साहित्य हाजरों-लाखों वर्ष पुराना साहित्य है। जन-जीवन की प्रत्येक अवस्था, प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक समय और प्रकृति के सभी रूप इसमें समाहित होते हैं। सामान्य जन से जुड़ा होने के कारण ही इसे लोक साहित्य कहा जाता है। लोकसाहित्य की भाषा शिष्ट और साहित्यिक न होकर साधारण जन की भाषा होती है। लोकसाहित्य की रचना में एक व्यक्ति विशेष का योग न होकर समूचे समाज का योगदान होता है। लोकसाहित्य को परिभाषित करते हुए धीरेन्द्र वर्मा लिखते हैं-"लोक साहित्य वह मौखिक अभिव्यक्ति है, जो भले ही किसी व्यक्ति ने गढ़ी हो, पर आज जिसे सामन्य लोक-समूह अपना ही मानता है और जिसमें लोक की युग-युगीन वाणी साधना समाहित रहती है, जिसमें लोक मानस प्रतिबिम्बित रहता है।"[1] लोक-साहित्य मौखिक अभिव्यक्ति का माध्यम होता है। इसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति या समाज अपने विचारों का आदान-प्रादन करता है। यह किसी भी समाज की प्राचीन सभ्यता का प्रमाण होता है।लोक-जीवनपर अपने विचार रखते हुए डॉ.सत्येन्द्र लिखते हैं कि, "लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो आभिजात्य संस्कार शास्त्रीयता और पांडित्य कीचेतना अथवा अहंकार से शून्य है और जो एक परंपरा के प्रवाह में जीवित रहता है।" [2] लोक-जीवनकिसी भी प्रकार के अहंकार से दूर होता है। इसके अंतर्गत प्रत्येक वर्ग व समाज एक दूसरे से जुड़कर चलने में ही अपना विकास मानता है।

इसी लोकजीवन अथवा लोक-साहित्य से जुड़े हैं रेणु। रेणु का सम्पूर्ण साहित्य लोक-जीवन से जुड़ा है। अपनी रचनाओं में ग्रामीण जीवन की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक पिछड़ेपन को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत किया है। रेणु ने ग्रामीण जीवन-शैली को जिस बारीकी से अपने साहित्य में समेटा है वह अन्यत्र दुर्लभ है। अपनी रचनाओं में जिस परिवेश को पिरोया है वह जीवन खुद जिया भी है। उनकी रचनाओं की दुनिया काल्पनिक नहीं बल्कि अनुभूत लोक है।

हिन्दी साहित्य में प्रेमचंद की यथार्थवादी परंपरा को किसी साहित्यकार ने बढ़ाया है तो वह रेणु है। रेणु ने भारतीय ग्रामीण समाज की संवेदनाओं को अपनी रचनाओं का विषय बनाया है। उन्होंने सांस्कृतिक बिंबो का इतना सुंदर प्रयोग किया है कि उन्हें लोक जीवन का चितेरा कहा जाए तो गलत नहीं होगा। वह अपनी रचनाओं में बिम्ब, प्रतीक, मुहावरे एवं ग्रामीण बोली-भाषा का जो पुट इस्तेमाल करते थे उसी से उनका पाठक वर्ग उनसे जुड़ जाता था। उन्होंने लोगों की समस्याओं को समझते हुये बेहद बारीकी से उसका विश्लेषण किया है। उनकी कहानियों के पात्र काल्पनिक न होकरआम प्रतिनिधि पात्र है। उनकी कहानियों के पात्र बिना किसी लाग-लपेट के, बिना कोई छल-कपट अपने भीतर समेट कर चलते हैं। उनके पात्र अत्यंत भोली प्रवृति के हैं।

'रेणु की कहानियों में सामान्य जन अपनी ईमानदारी, भोलेपन, सच्चाई और सादगी के चलते पीड़ित और अभाव ग्रस्त है। यह अभाव कई रूपों में हैं, जीविका का अभाव, रोटी का अभाव, जागृति का अभाव, प्रेम का अभाव, एकता का अभाव इन सबसे जैसे एक ही साथ झुझने की कोशिश करते हैं उनके पात्र।'' [3] रेणु की कहानियों के पात्र उपेक्षित वर्ग से आते हैं। इसी कारण रेणु उनके मर्म को पूरी ईमानदारी से चित्रित करते हैं और वह ऐसा करने में सफल भी होते हैं। रेणु की सहानुभूति गरीब जनता के प्रति दिखाई देती है। रेणु के संदर्भ में डॉ.रणधीर सिन्हा लिखते हैं, "वह सामाजिक सामान्य जन-जीवन को अपना साध्य मानते हैं और वस्तुनिष्ठ यथार्थवादी रचनाकर के लिए महत्तर लोक-जीवन ही प्राथमिक महत्त्व और मूल्य के रूप में स्वीकार्य होता है। आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक दृष्टियों से पिछड़ा हुआ लोक-जीवन यथार्थवादी लेखक को इसलिए प्राभवित करता है कि वह उसके बाहरी और भीतरी सोपानों का सिंहावलोकन कर, उसकी छिपी हुई समस्याओं को उद्दीप्त कर सके और मार्मिक बोध से उनके समाधान का मार्ग खोजने के लिए समाज को बाध्य कर सके ताकि वास्तविकता से प्रस्फुटित उसकी चेतना निस्तार पा सके।"[4] कहा जा सकता है कि वास्तविक रूप से जो लेखक यथार्थवादी होता है उसे पिछड़ा हुआ समाज अवश्य ही प्रभावित करता है। इसी कारण रेणु के साहित्य में पिछड़े हुए समाज का यथार्थ रूप में चित्रण हुआ है। कह सकते हैं कि उन्होंने सामान्य जन की पीड़ा को देखा और परखा है।

हिन्दी साहित्य में रेणु ने अपनी पहचान 'बट बाबा' कहानी से बनाई। यह कहानी 1941 में प्रकाशित हुई थी। इस कहानी में उन्होंने एक बरगद के पेड़ को केंद्र में रखा है। कहानी ग्रामीण जीवन पर आधारित है। इस कहानी के बाद से ही उनकी रचनाओं का केंद्र ग्रामीण समाजबना। उनकी "हर कहानी में एक प्रकार की लिरिक है, जिसमें दर्द और बैचेनी है। जीवन को सहेजने-समेटने की छटपटाहट है। इनकी कहानियों में सामाजिक अंधविश्वास, जातिवाद, आडंबरों की अभिव्यक्ति स्वत: होती गयी है। समाज में व्याप्त विसंगतियों के प्रति रेणु सतर्क रहते हैं। ग्राम अंचल के सांस्कृतिक परिवेश की अभिव्यक्ति एवं लोक मिथकीय संवेदना भी फूट-फूट कर उभरती है।" [5] रेणु जी समाज में घटित घटनाओं के प्रति वह हमेशा सतर्क रहे हैं।

रेणु जी बड़े प्रतिभावान किस्सागो थे। अपनी अभिव्यक्ति को गाँव के प्रत्येक व्यक्ति तक पहुंचाने के लिए उन्होंने किस्सागोई का सहारा लिया-"रेणु ने किस्सागोई नहीं छोड़ी, कथा के रस के साथ कोई वंचनापूर्ण खेल नहीं खेला। फिर भी उनकी कहानियों में समकालीन भारत-बृहत्तर भारत से साक्षात्कार में अनेक रूपरूपांतर हैं।"[6] अपनी कहानी में उन्होंने मनुष्य की संनवेदना एवं विसंगतियों आदि विषयों पर किस्सागोई के सहारे नया अर्थ प्रादन किया है। रेणु की कई कहानियाँ ऐसी हैं जो मनुष्य के जीवन से सीधा संपर्क साधती हैं। उनकी राचनाओं में समाज के हर तबके के व्यक्ति के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है। उनकी रचनों में ग्राम जीवन का बड़ा यथार्थवादी चित्रण दिखाई देता है। गरीब हो या अमीर, किसान हो या मजदूर सबका चित्रण बड़ी सहजता से अपनी रचनाओं में किया है। इस संदर्भ में अज्ञेय जी लिखते हैं, 'रेणु के मन में बिहार और गाँव के लिए बेहद प्यार था। वह वहाँ के एक-एक जर्रे से जुड़े थे। अपने गाँव में एक-एक आदमी को जानते थे हर बोली का अलग-अलग राग उनकी धमनियों में बजता था। और हर एक के भीतर कसमसाहट गंध बनकर उन्हें कसे रहती थी।' रेणु स्वयं किसान परिवार से थे। इसलिए भी वह उस गरीब तबके की समस्याओं का यथार्थवादी ढंग से उल्लेख करते थे।

रेणु जी लोक-गीतों एवं लोक-कथाओं के माध्यम से कथा खने में माहिर है। अपनी रचनाओं में उनहोंने लोक-संस्कृति को बसा कर रखा है और यही बसावट उनके लोक-प्रेमी स्वभाव का प्रमाण है। रेणु की कहानियों में लोक-जीवन के विविध रूप दिखाई देते हैं।

रेणु ने कहानियों में लोक संस्कृति का विशेष ध्यान दिया है। वह लोक संस्कृति के पक्षधरता हैं। उनकी कहानी 'रसप्रिया' में लोक-संस्कृति खूब झलकती हुई दिखाई देती है। 'रसप्रिया' कहानी बिहार के एक पूर्णिया जिले की कहानी है। कहानी में विद्यापति की पदावली का खूब गायन हुआ है। कहानी का मुख्य पात्र 'मिरदंगिया' है जो अपने गले में मृदंग टाँगे गाता बजाता। इसी मृदंग के सहारे वह अपना जीवन यापन करता है। मिरदंगिया मृदंग बजाने वाला लोक-कलाकार है। मृदंग बजते-बजते उसकी उंगली टेढ़ी हो जाती जिससे मृदंग बजाने में उसे परेशानी होती है परंतु लोक-संस्कृति के प्रति उसका लगाव इतना गहरा है कि वह मृदंग बजाने का प्रयास लगातार करता है और अपनी लोककला को जिंदा रखना चाहता है। "पंद्रह साल से वह गले में मृदंग लटकाकर गांव-गांव घूमता है, भीख मांगता है।... दाहिने हाथ की टेढ़ी उंगली मृदंग पर बैठती ही नहीं है, मृदंग क्या बजाएगा! अब तो 'धा तिंग धा तिंग' भी बड़ी मुश्किल से बजाता है।... अतिरिक्त गाँजा भाँग सेवन से गले की आवाज विकृत हो गई है। किंतु मृदंग बजाते समय विद्यापति की पदावली गाने की वह चेष्टा अवश्य करेगा।...फूटी भाथी से जैसी आवाज निकलती है, वैसी

ही आवाज-सों-य,सों-य!"[7] मिरदंगिया को अपनी लोक-संस्कृति से अथाह प्रेम है। वह अपनी लोक-संस्कृति को औझल होते देख रहा है। मिरदंगिया के माध्यम से लोक-संस्कृति के प्रति जो चिंता व्यक्त हुई है असल में वह चिंता रेणु की है। इसी चिंता को वह स्वयं व्यक्त करते हुए कहते हैं, "जेठ की चढ़ती दोपहरी में खेतों में काम करने वाले भी अब गीत नहीं गाते हैं।.....कुछ दिनों के बाद कोयल भी कूकना भूल जाएगी क्या? ऐसी दोपहरी में चुपचाप कैसे काम किया जाता है। पाँच साल पहले तक लोगों के दिल में हुलास बाकी था।" [8] रेणु की लोक-संस्कृति के प्रति गहरी संवेदना है। लोक-संस्कृति के प्रति रेणु का प्रेम देखते ही बनता है।

कहानी का मिरदंगिया आर्थिक रूप से तो गरीब है लेकिन वह सांस्कृतिक स्तर पर सम्पन्न है। वह अपनी लोक-कला में माहिर है। "पंचकौड़ी गुनी आदमी है। दूसरी-दूसरी मंडली में मूलगैन और मिरदंगिया की अपनी-अपनी जगह होती। पंचकौड़ी मूलगैन भी था और मिरदंगिया भी। गले में मृदंग लटकाकर बजाते हुए वह गाता था, नाचता था। एक सप्ताह में ही नया लड़का भंवरी देकर परवेश में उतरने योग्य नाच सीख लेता था।" [9] यह कला मिरदंगिया में थी कि वह हफ्ते भर में ही नया कलाकार तैयार कर सकता था।

लोक-संस्कृति को समर्पित उनकी सबसे लोकप्रिय कहानी 'तीसरी कसम' अत्यंत महत्वपूर्ण कहानी है। लोक-कथा और लोक-गीतों के माध्यम से कहनी के कलेवर को गढ़ा गया है। कहानी हिरामन और हिराबाई के मन में उत्पन्न होनें वाली प्रेम संवेदनाओं को दर्शाती है। हिरामन बीस साल से गाड़ी खीचनें का काम करता है। वह इस गाड़ी में चोरी का समान या बाँस की ही लदनी करता रहा है। परंतु आज उसकी गाड़ी में नाटक कंपनी में काम करने वाली स्त्री बैठीहै। उसके बैठने से हिरामन के पूरे शरीर में गुदगुदी और एक मनमोहक खुशबू का एहसास होता है। वह इस एहसास को महसूस करते हुए सोचता है कि, "इस बार यह जनानी सवारी। औरत है या चंपा का फूल। जब से गाड़ी मह-मह महक रही है.....। अनदेखी औरत की आवाज़ ने हिरामन को अचरज में डाल दिया। बच्चों की बोली जैसी महीन, फेनूगिलासी बोली। [10]" हिराबाई की इतनी मधुर आवाज़ सुनकर ही हिरामन के दिल में तरंगे उठने लगती हैं। 'तीसरी कसम' में हिरामन न और हिराबाई को एक दूसरे से प्रेम हो जाता है। परंतु यह प्रेम सार्वजनिक स्तर पर स्वीकार्य नहीं होता और इसी डर से हिरामन और हिराबाई भी एक दूसरे के सामने प्रेम का इज़हार करने में असमर्थ होते हैं। रेणु ने हिरामन और हिराबाई के प्रेम को 'महुआ घटवारिन' की लोककथा का सहारा लेकर इनके प्रेम को उजागर किया। 'महुआ घटवारिन' बिहार की एक ऐसी लोक प्रेम कथा है जो आज भी वहाँ प्रचलित है। 'महुआ घटवारिन' की कथा इस कहानी का मुख्य बिन्दु है या यूं कहे अहम हिस्सा है चूंकि महुआ घटवारिन हिराबाई के दर्द से जुड़ी हुई है। जहां हिराबाई अपना दर्द स्वयं नहीं कह पाती वहाँ इस कथा के द्वारा उसका दर्द पाठकों के सामने उजागर होता है। हिराबाई को देखते सुनते हिरामन कहता है कि, "....इस्स !इतना तेज़ जेहन!हू-ब-हू महुआ घटवारिन!" [11] रेणु ने इसी 'महुवा घटवारिन' की कथा के माध्यम से हिराबाई की मूक प्रेम अभिव्यक्ति को चित्रित किया है,"महुवा घटवारिन की कथा इन दोनों के मौन प्रेम को प्रतिकात्मक ढंग से खोलती है। इस कथा के माध्यम से ही उनके बीच का मौन प्रेम और उस प्रेम से बिछड़ने के दर्द के बाद की छटपटाहट को व्यक्त करती है।" [12] हिरामन न और हिराबाई का प्रेम भी महुआ घटवारिन और उसके प्रेमी की तरह अधूरा रह जाता है। हिराबाई के वापिस लौट जाने की विवशता से हिरामन परेशान होता है। उसकी परेशानी को भाँपते हुए हिराबाई कहती है,"तुम्हारा जी बहुत छोटा हो गया है। क्यों मीता?महुआ घटवारिन को सौदागर ने खरीद जो लिया है गुरुजी।" [13] इतना बोलते ही हिराबाई का गला रुँध जाता है। हिरामन हिराबाई के जाने से कसम कहता है कि वह अब कभी नौटंकी की स्त्री को अपनी गाड़ी में नहीं बैठाएगा और यह कसम खाते हुए वह टूट जाता है। अपनी पीड़ा को व्यक्त करते हुए हिरामन लोक गीत गाता है,"अजी हाँ, मारे गए गुलफाम ....।" [14] इसी लोकगीत पर कहानी का अंत हो जाता है। इस प्रकार रेणु ने 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' कहानी में लोककथा और लोक गीतों का अच्छा प्रयोग किया है। उनके द्वारा किया गया यह प्रयोग लोक-संस्कृति के प्रति उनके गहर लगाव को व्यक्त करता है।

रेणु 'संवदिया' कहानी में लोक-जीवन के ऐसे पात्र की मनोव्यथा उजागर करते है जो तात्कालिक समाज में मुख्य भूमिका निभाता था यह पात्र है 'हरगोबिन संवदिया'। संवदिया संवाद ले जाने का काम करते हैं। कहानी में मुख्य पात्र है 'बड़ी बहुरिया'। बड़ी बहुरिया अपने ससुराल में अत्यंत कष्ट और पीड़ा झेल रही है। इसी संवाद को वह अपने घर भिजवाती है। संवदिया का संवाद पहुँचाने का कार्य बड़ा कष्टदायक होता है चूंकि उसे संवाद उसी तरह सुनना पड़ता है जिस तरह उससे सुनाया जाता है। इसलिए संवदिया का कार्य हर कोई नहीं कर सकता। बड़ी बहुरिया के बुलावे पर हरगोबिन आता है। "संवाद सुनाते समय बड़ी बहूरिया सिसकने लगी। हरगोबिन की आंखें भी भर आयी। बड़ी हवेली की लक्ष्मी को पहली बार इस तरह सिसकते

देखा है हरगोबिन ने। वह बोला बड़ी बहुरिया, दिल को कड़ा कीजिये। और कितना कड़ा करूँ दिल? माँ से कहना, मैं भाई- भाभी की नौकरी करके पेट पालूँगी। बच्चों की झूठन खा कर एक कोने में पड़ी रहूँगी, लेकिन यहाँ अब नहीं... अब नहीं रह सकूँगी।" [15] बहुरिया की दुखद कथा सुनकर संवदिया का कलेजा फटने लगता है और वह उसके मेके से बिना कुछ कहे ही वापिस आ जाता है। संवदिया बहुरिया के घर से भूखा-प्यासा ही वापिस लौट आ आता है और आते आते बेहोश होकर गिर जाता है। अंत में वह बहुरिया से रोते रोते कहता है कि, "बड़ी बहुरिया! मुझे माफ करो! मैं तुम्हारा संवाद नहीं कह सका।.....तुम गाँव छोडकर मत जाओ। तुमको कोई कष्ट नहीं होने दूंगा। मैं तुम्हारा बेटा! बड़ी बहुरिया तुम एरी माँ, सारे गाँव की माँ हो।" [16] संवदिया का संवाद न सुना पाना और बहुरिया को गाँव छोड़कर ना जाने देना गांव की संस्कृति है। यह संस्कृति गाँव में रह रहे लोगों का आपसी प्रेम है। यही तो वो लोक है जिसे रेणु छोड़ना नहीं चाहते।

लोक-जीवन को उद्धृत करती रेणु की महत्त्वपूर्ण कहानी है 'नेपथ्य का अभिनेता' यह कहानी पारसी थियेटर से जुड़े अभिनेता की संवेदना को उजागर करती है। आधुनिक समय में लोक-कला का जिस तरह अंत हो रहा है उस अंत से लोक-कलाकारों के जीवन पर जो प्रभाव पड़ रहा है उसे बड़ी हही मार्मिकता से उद्धृत किया है। कहानी में एक प्रसंग आता है, "साहब अब कहाँ की कंपनी और कहाँ का थियेटर। सबको फिल्म कहा गया। उसने हँसने की निरर्थक चेष्टा की।" [17] विज्ञान काआविष्कार कई लोगों की गरीबी का भी कारण बन रहा है। लोक-जीवन के ऐसे अभिनेता लुप्त होते जा रहे हैं उनके जीवन का संपूर्ण परिदृश्य इस कहानी में रेणु ने मंर्मिक संवेदना के साथ व्यक्त करते हैं।

इन कहानियों की तरह ही रेणु की अन्य कहानियाँ भी हैं जहां लोक-जीवन की झलक देखने को मिलती है। उनकी अन्य कहानियाँ है- लाल पान की बेगम,पंचलाइट, रसूल मिस्त्री, ठेस आदि कहानियाँ हैं जिनमें लोक-जीवन की झलक देखने को मिलती है। "रेणु की कहानियों में आंचलिकता है क्योंकि वे कहानियाँ उनके जनपद के जीवन, रहन-सहन, भाषा-मुहावरे, रूढ़ियों-अंधविश्वासों, पर्व-उत्सव,लोक-जीवन, गीत-नृत्य आदि को चित्रित करती हैं।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि फणीश्वरनाथ रेणु ग्रामीण परिवेश को अपनी कहनियों में पूर्णत: से उकेरने में सफल रहे हैं। उनकी कहानियों में समाज के पिछड़े, दमित वर्ग की कथा को केंद्र में रखा गया है। इनकी कहानियों में लोक से जुड़े निम्न वर्ग के हस्त कलाकारों का बहुत बारीकी सी चित्रण हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि रेणु की नज़र से कुछ भी छुपा नहीं है। अपने अंचल विशेष का वर्णन करते हुए वह ऐसे लगते हैं कि उस अंचल में बसने वाले किसी भी व्यक्ति और उसकी जिंदगी से उनकी दृष्टि पल भर के लिए भी हटती हुई नहीं दिखाई देती। एक-एक चीज़ का बड़ी सहज आत्मीयता के साथ विश्लेषण से करते हुये दिखाई देते हैं। इसलिए ही उन्हें आंचलिक लेखक की पदवी मिली है।

रेणु अपनी कहानियों में लोक-संस्कृति की अभिव्यक्ति किस्सागोई के माध्यम से करते हैं। वह किस्सागोई के ज़रिए समाज के प्रत्येक व्यक्ति से संबंध साधने में सफल होते हैं। रेणु की रचनाओं में जो यथार्थ दिखाई पड़ता है वह प्रेमचंद की तरह है या यह भी कह सकते हैं कि रेणु प्रेमचंद की अगली कड़ी का हिस्सा है जो और मुखरता से मुखरित हुआ है।

अत: लोक-संस्कृति इनकी रचनाओं का रस है जिसके मर्म को वो पकड़े रहते हैं।

संदर्भ सूची

1. वर्मा, धीरेन्द्र. (संवत् 2020): हिन्दी साहित्य कोश, भाग 1. वाराणसी. ज्ञानमण्डल लि. प्रकाशन. पृ. 597
2. सत्येन्द्र, डॉ. (1972): लोक साहित्य विज्ञान. आगरा. शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, पृ. 3
3. परवीन, फरहत. (संपा.). (अप्रैल 2016): आजकल. पृ. 8
4. परवीन, फरहत. (संपा.). (अप्रैल 2016): आजकल. पृ. पृ. 8
5. यायावर, भारत. (संपा.), (जुलाई 1999): विपक्ष, पृ. 195
6. यशवंत, लोकनाथ. (2015): आखिर क्या हुआ. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. पृ. 183
7. यायावर, भारत. (संपा.), (1959): फणीश्वरनाथ रेणुचुनी हुई रचनाएं भाग 1.नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. पृ. 68
8. रेणु, फणीश्वरनाथ. (2020): ठुमरी. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन. पृ. 12
9. यायावर, भारत, (संपा.), (1959): फणीश्वरनाथ रेणुचुनी हुई रचनाएं भाग 1.नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. पृ. 70
10. रेणु, फणीश्वरनाथ. (2020): ठुमरी.नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन. पृ. 97
11. रेणु, फणीश्वरनाथ. (2011) : प्रतिनिधि कहानियाँ. नई दिल्ली. किताबघर प्रकाशन. पृ. 152.

12. दृष्टतव्य, तीसरी कसम, फणीश्वरनाथ रेणु की प्रतिनिधि कहानियाँ. पृ. 120-121
13. रेणु, फणीश्वरनाथ (2011): प्रतिनिधि कहानियाँ. नई दिल्ली. किताबघर प्रकाशन. पृ. 152
14. रेणु, फणीश्वरनाथ. (2020): ठुमरी. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन. पृ. 126
15. यायावर, भारत, (संपा.), (1959): फणीश्वरनाथ रेणुचुनी हुई रचनाएं भाग 1. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. पृ. 196-197
16. यायावर, भारत, (संपा.), (1959): फणीश्वरनाथ रेणुचुनी हुई रचनाएं भाग 1.नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. पृ.202
17. यायावर, भारत, (संपा.), (1959): फणीश्वरनाथ रेणुचुनी हुई रचनाएं भाग 1.नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. पृ. 122